Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 12, Issue 01, January-June, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2024

ठुमरी - भारतीय उपशास्त्रीय संगीत की प्रतिष्ठित गायन शैली

BALDEEP KAUR
Ph.D. Research Scholar, Department of Music and Performing Arts,Allahabad University

सार: *भारतीय संगीत में विभिन्न प्रकार की गायन शैलियां हैं जिनमें ठुमरी गायन शैली अपना विशिष्ट स्थान रखती है। ठुमरी शब्द ठुम+री से बना है। ठुम का भाव ठुमक-ठुमक कर चलना और री का भाव रिझाने से है। राधा का ठुमक-ठुमक कर चलना और अपनी भाव भंगिमा से कृष्ण को आकर्षित करना ही ठुमरी है। ठुमरी का आविष्कार कब हुआ और किसने किया संगीत विद्वान एक मत नहीं है। कुछ विद्वान अवध नवाब वाजिद अली शाह को ठुमरी का आविष्कारक मानते हैं तो कुछ विद्वानों का मत है कि सादिक अली खां ने ठुमरी का आविष्कार किया। शोरी मियां को भी कुछ विद्वान ठुमरी के उद्भव का श्रेय देते हैं। ठुमरी के तीन अंग है लखनऊ, बनारस एवं पंजाब। लखनऊ तथा बनारस में बोलतान की ठुमरी तथा पंजाब बोल बांट की ठुमरी के लिए प्रसिद्ध है। ठुमरी मूल रूप में ब्रजभाषा, स्थानीय बोलियों, भाषाओं तथा धुनों से उद्भवित हुई। ठुमरी का आधार लोकगीत माना जाता है। कुछ विद्वान ठुमरी को क्षुद्र तथा वेश्याओं के कोठे पर गायी जाने वाली शैली मानते हैं परंतु राधा-कृष्ण से संबंधित ठुमरी क्षुद्र नहीं हो सकती क्योंकि महान ठुमरी गायकों द्वारा इसे बड़े-बड़े संगीत सम्मेलनों में गाया जाता है। ठुमरी मधुर, कोमल, निराशा, संयोग-वियोग युक्त एक कलात्मक शैली है। ठुमरी संपूर्ण भारत के संगीतज्ञों की ही नहीं अपितु विश्व भर के संगीतकारों की एक प्रिय शैली बन चुकी है जिसकी श्रृंगारिता, कोमलता, मधुरता, करूणा एवं आशा-निराशा का भाव गायक एवं श्रोताओं को अपनी ओर आकर्षित करता है।*

कुंजी शब्द*: भूमिका, अर्थ, ठुमरी की उत्पत्ति एवं विकास, ठुमरी के अंग, आलोचना, निष्कर्ष।*

भूमिका

भारतीय संगीत की मुख्य गायन शैलियों यथा ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा की भांति ब्रजभाषा उद्भवित ठुमरी भी एक प्राचीन गायन शैली है जो मध्यकालीन युग से न केवल उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब अपितु संपूर्ण भारतीय संगीत क्षेत्र की अद्वितीय गायन शैली है। यह एक ऐसी गेय विधा है जो लोकरुचियों की संवेदनाओं पर आधारित है जिसकी गायकी का मूल आधार ब्रजभाषा एवं क्षेत्रीय भाषाएं हैं। राधा कृष्ण की लीलाओं के श्रृंगारमयी गीत, राधा का कृष्ण को छकाना, हंसना, चिढ़ाना, व्यंग्यात्मक वार्ता, नृत्य करना, प्रेमी-प्रेमिका के आध्यात्मिक ब्रज के गीत वास्तव में ठुमरी के ही प्रतीक है। चार-पांच शताब्दियों के पूर्व गीत पर आधारित नृत्य गायन की विधा स्वतंत्र रूप में ठुमरी के नाम से प्रसिद्ध हुई। तात्पर्य यह है कि गीत नृत्य का नवीनतम स्वरूप ही ठुमरी के नाम से जाना जाने लगा। "ब्रज क्षेत्र का प्रेम और श्रृंगारमयी कृष्णलीला और उससे संबंधित कथक नृत्य से ठुमरी का ऐतिहासिक संबंध जोड़ा जाता है।" ठुमरी श्रृंगार रस से युक्त वह विशेष गायन शैली है जिसमें नायिका का प्रेम विरह, मिलन, प्रसन्नता के भाव का प्रकटन है। ठुमरी नारी के कोमल हृदय की श्रृंगारमयी भाव की वह प्रस्तुति है जिसके गीतों में प्रेमा भक्ति अनेक स्थायी व अस्थायी मनो भावनाओं का चित्रण है जैसे आशा-निराशा, हर्ष-शोक, भक्ति-अनुराग जो श्रृंगार संयोग-वियोग, करुणा, विस्मय बोधक रस से पूर्णतया अलंकृत रहते है।

अर्थ:- ठुमरी शब्द ठुम+री दो शब्दों की संधि है। राधा-कृष्ण की प्रेम गाथाओं में यह प्रचलित है कि राधा नृत्य द्वारा अपनी भाव भंगिमा से कृष्ण को अपनी ओर आकर्षित करती है। ठुमरी अर्थात् ठुमक- ठुमक कर इठलाते हुए चलना और री का भाव रिझाना, प्रसन्न करना, आकर्षित करना है। राधा का गीत गाना एवं प्रदर्शन ही ठुमरी कही जाती है जो न केवल लय अपितु भाव अभिव्यंजना का प्रतीक भी है। वास्तव में कहा जाए तो ठुमरी अभिनय का वह प्रस्तुतीकरण है जिसमें कलाकार (नृत्य) के वाह्य एवं अंतर मन का संगीत में विवेचन एवं प्रदर्शन समाहित है। "ठुम ठुमकने का द्योतक है और री अंतरंग सखी से अपने अंतर की बात कहने का।"

जब नारी (नृत्यांगना) नृत्य करते हुए अपनी कैशिकी वृत्ति अर्थात सुंदर केश वाली नारी अपने नृत्य एवं गायकी में अपनी अदा का प्रदर्शन करती है जिसमें स्वर, भाषा, लय, ताल, बोल और मार्ग का उचित समन्वय होता है तो उस गीत को ही ठुमरी कहा जाता है। "ठुमरी में 'स्वर' और 'शब्द'-- दोनों परस्पर पूरक हैं।" अर्थात् शब्द का स्वर के माध्यम से भिन्न-भिन्न छवियों में प्रदर्शन ही ठुमरी है। इसीलिए तो कहा जाता है कि स्वर और शब्द ठुमरी रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं और लय उसकी आनंदित चाल है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 12, Issue 01, January-June, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2024

ठुमरी की उत्पत्ति एवं विकास

ठुमरी की उत्पत्ति कब हुई निश्चित रूप में नहीं कहा जा सकता परंतु इतना तो अवश्य ही कहा जा सकता है की इसकी उत्पत्ति ध्रुपद, धमार, ख्याल व टप्पा के पश्चात् 19वीं शताब्दी में हुई। रीतिकाल श्रृंगार रस की विधा ठुमरी का विकास अवध के विलासी दरबार जो की विलासिता एवं कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध था के उच्च कोटि के रसिक नर्तक नवाब वाजिद अली शाह जिन्होंने राधा कृष्ण की संयोग-वियोग विषयक प्रेम गाथाओं के आधार पर अनेक ठुमरी गीतों की रचना की ठुमरी शैली का आविष्कारक माने जाते हैं। "इसका संबंध नवाब वाजिद अली शाह से जोड़ते हुए कुछ लोग इसे उस काल की ही देन मानते हैं।" तिथियों के आधार पर कुछ विद्वानों ने उस्ताद सादिक अली खां को ठुमरी का आविष्कारक कहा है। "कहते हैं कि वाजिद अली शाह और नवाब वज़ीर मिर्ज़ा वाला कदर उर्फ 'कदर मियां' ने भी सादिक अली खां से ठुमरी का ज्ञान प्राप्त किया था।" सादिक अली खां का समय (1800 से 1910) माना जाता है जबकि नवाब अली शाह का जन्म 1822 में हुआ। वाजिद अली शाह उम्र में लगभग 22 वर्ष छोटे थे। ततसमय ठुमरी शैली पूर्णतया विकसित हो चुकी थी अतः वाजिद अली शाह ने ठुमरी का आविष्कार नहीं किया अपितु ठुमरी के विकास में इनका अकथनीय योगदान अवश्य रहा। "नवाब वाजिद अली शाह के दरबार मे यह गायन शैली बहुत विकसित हुई। नवाब वाजिद अली शाह स्वयं ठुमरी गायन में प्रवीण थे। उन्होंने अनेक ठुमरियों की रचना की।"

कुछ विद्वान पंजाब के शोरी मियां जो लखनऊ के संगीतकार माने जाते हैं को ठुमरी का आविष्कारक मानते हैं। "गीत सूत्रसार ग्रंथ के अनुसार क्षेत्रमोहन गोस्वामी ने अपने ग्रंथ 'संगीत सार' में ठुमरी के आविष्कर्ता के रूप में लखनऊ के संगीतज्ञ शोरी मियां के नाम का उल्लेख किया है।" आसिफ़ुद्दौला और शोरी मियां एक युग के संगीतज्ञ माने जाते हैं और आसिफ़ुद्दौला का समय 1792 मानते हैं। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि वाजिद अली खां के पूर्व ही 18वीं शताब्दी के अंत अथवा 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में ठुमरी का उद्भव हो चुका था।

ठुमरी के अंग:- ठुमरी तीन अंगों से गायी जाती है।

- लखनऊ अंग की ठुमरी
- बनारस अंग की ठुमरी
- पंजाब अंग की ठुमरी।

लखनऊ और बनारस भारत के उत्तर के पूर्व की ओर होने के कारण इस क्षेत्र की ठुमरी को पूरब अंग की ठुमरी कहते हैं। उत्तर के पश्चिमी भाग में स्थित पंजाब क्षेत्र की ठुमरी को पश्चिमी अंग की ठुमरी कहते हैं।

लखनऊ अंग की ठुमरी के विकास में अवध के नवाब वाजिद अली खां जिन्होंने अनेक ठुमरी की रचना की का बहुत योगदान है। लखनऊ ठुमरी विलासमयी राज दरबारों द्वारा पोषित रही। इस शैली पर टप्पा शैली का प्रभाव पड़ा। "लखनऊ की ठुमरी शैली में अभिजात्य संगीत परंपरा और दरबारी शान शौकत, बोलों की नजाकत और भावुकता की प्रधानता है, साथ ही खटका, मुर्की और छोटी-छोटी तानों की अच्छी सजावट रहती है।"

बनारस अंग की ठुमरी मूल रूप में पूरब की ठुमरी कहीं जाने लगी है क्योंकि अपनी विशेषताओं के कारण यह ठुमरी इतनी लोकप्रिय हो गई कि विद्वान इसे पूरब अंग की ठुमरी न कहकर बनारसी ठुमरी की संज्ञा प्रदान करते हैं। लखनऊ में विकसित ठुमरी का बनारस में आगमन हुआ। बनारस अंग की ठुमरी बनारस क्षेत्र के आसपास की ठुमरी होने व लोकप्रियता के कारण इतनी प्रचलित हुई कि इसने लखनऊ अंग की शैली को परास्त किया। कहा जाता है कि बनारसी ठुमरी की नींव सादिक अली खां ने रखी तथा मौजुद्दीन खां, भैया गनपत राव जैसे विद्वानों ने बनारसी अंग की ठुमरी को सफलता के शिखर तक पहुंचाया। पूरब अंग की ठुमरी के गायको में पं० ललन पिया, सनद पिया, मौजुद्दीन खां, जगदीप मिश्रा, रसूलनबाई, बड़ी मोतीबाई, सिद्धेश्वरी देवी, गिरिजा देवी, महाराज बिन्दादीन ठुमरियों के कुशल गायक थे। कहा जाता है कि यदि ठुमरी गायन के संदर्भ में भैया गणपत राव के नाम का उल्लेख न किया जाए तो ठुमरी पूर्णतया प्रभावहीन सी प्रतीत

होती है। "दिलीपचंद्र बेदी के शब्दों में- भैया गनपत राव ने ठुमरी गाने में ऐसी तराश पैदा की कि तमाम गायक उनकी तकलीद (अनुकरण) करने लगे।" मौजुद्दीन खां ठुमरी के मशहूर गायक थे। के अतिरिक्त गौहर जान, बखीर खां, गफूर खां, बाबू श्याम लाल और मीर साहब भी भैया साहब के शिष्य जिन्होंने ठुमरी गायन में प्रसिद्धि प्राप्त की।

भारतीय संगीत में ठुमरी विधा अत्यंत लोकप्रिय विधा है जिसके विकास में पंजाब की ठुमरी का विशेष स्थान है। पंजाब की ठुमरी अपनी विशिष्टता के कारण भारतीय ठुमरी का एक स्वतंत्र अंग माना जाता है जिसे पंजाबी ठुमरी कहा जाता है। पंजाब अंग ठुमरी के लिए पंजाब क्षेत्र के प्रसिद्ध गायक अली बख्श का नाम अति सम्मान के साथ लिया जाता है क्योंकि इन्हीं के द्वारा ही पंजाब अंग की ठुमरी का प्रारंभ हुआ। "संगीत शास्त्रविद् पंडित दिलीपचंद्र बेदी ने बताया कि इसको वर्तमान स्वरूप देने वाले पंजाब क्षेत्र के सुप्रसिद्ध गायक स्वर्गीय अली बख्श 'कसूरी' हैं।" पंजाब ठुमरी की लोकप्रियता के संबंध में एक विद्वान का मत है कि "पंजाब अंग की शैली आज से लगभग चालीस वर्ष पहले, इसी शताब्दी के चौथे दशक से लोकप्रिय हुई है।" पंजाब अंग की ठुमरी का उद्भव आज से एक सौ पचास साल पूर्व का माना जा सकता है।

पंजाब अंग की ठुमरी पर टप्पा विधा का प्रभाव है जिसमें बोल बनाव के अतिरिक्त गायक छोटी-छोटी तानों पर बोल तानों के साथ ही मुर्की, जमजमा आदि का प्रयोग करता है। पंजाब अंग की ठुमरी सप्तक के ऊंचे स्वरों में गायी जाती है जबकि पूरब अंग की ठुमरी में विशेषतया मध्य स्वर का प्रयोग होता है। पंजाब ठुमरी में जहां टप्पों की भरमार रहती है वहीं इस विधा में मुल्तान, काफी, सिंधी काफी विधा का प्रभाव भी है। वैसे तो भारतीय ठुमरी के लिए ब्रजभाषा का प्रयोग अधिकांश है परंतु पंजाब में ब्रजभाषा, पंजाबी भाषा, हिंदी भाषा का प्रयोग का मिश्रण है। पंजाब अंग की ठुमरी में गुलाम अली खां, बरकत अली खां, स्वर्गीय आशिक अली, मियां शोरी, किराना घराने के अब्दुल करीम खां, आफताबे मूस्सीकी, उस्ताद फैयाज, पाकिस्तान के सलामत अली खां, नजाकत अली खां, पटियाला के अब्दुल रहमान खां आदि पंजाब अंग की ठुमरी गायक हैं। "वर्तमान युगमें शामचौरासी घराने के वंशज पाकिस्तान के शीर्ष गायक उस्ताद सलामत अली खां ने भी पंजाब अंग की ठुमरी गायन में चार-चांद लगा दिये हैं।" वर्तमान में ठुमरी के दो भेद प्रतिष्ठित हैं:-

- 1- बोल बांट की ठुमरी
- 2- बोल बनाव की ठुमरी

बोल बांट की ठुमरी लय प्रधान है जिसमें थिरकने और मचलने का भाव समाहित है इस कारण बोल बांट की ठुमरी को गति प्रधान ठुमरी कहा जाता है। लखनऊ से पश्चिम उत्तर प्रदेश के रामपुर, बरेली की ठुमरियों की बंदिश पर यदि विचार किया जाए तो इस भाग की ठुमरियां बोल बांट लय से सजी हुई है। यहां तक कि इन ठुमरियों का स्वर पक्ष बोल बांट की लय का अनुकरण करता है। बोल बांट की ठुमरियों की रचना अपनी विशेषताओं के कारण बंदिश ठुमरी के नाम से जानी जाती हैं। पश्चिमी ठुमरियों का क्षेत्र उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग मुख्यत: ब्रज, बुंदेलखंड, रामपुर होने के कारण इन ठुमरियों में होली सावन मल्हार आदि स्थानीय लोकगीतों की धुनों का प्रभाव परिलक्षित होता है। बोल बांट की ठुमरी का क्षेत्र विस्तृत है जो फर्रुखाबाद इटावा बरेली रामपुर मथुरा से लेकर दिल्ली तथा उसके आसपास के क्षेत्र में गायी जाती है। यह ठुमरियां अधिकतर झपताल तीनताल रूपक आदि तालों में गायी जाती हैं।

बोल बनाव की ठुमरी लखनऊ तथा लखनऊ से पूरब क्षेत्र की ठुमरी है जो पूर्णतया भाव प्रधान है। इस ठुमरी को पूरब अंग की ठुमरी कहा जाता है चूंकि लखनऊ के पूरब में ब्रज, अवध और भोजपुरी भाषा बोली जाती है अतः इन ठुमरियों की भाषा भी ब्रज, भोजपुरी तथा अवधी है। इस प्रकार बोल बनाव की ठुमरी पर इस क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषाओं के लोकगीतों और लोकधुनों का प्रभाव पड़ा। चैती, कजरी, पूरबी का प्रभाव भी बोल बनाव की ठुमरी पर पड़ा जो सुरीलेपन और चैनदारी के लिए प्रसिद्ध है। यह अधिकांशत: तिलंग, देश, तिलककामोद, काफी, सिंदूरा, मांड, भैरवी रागों में गायी जाती है तथा इस ठुमरी में दीपचंदी, जत, पंजाबी तालों का प्रयोग होता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 12, Issue 01, January-June, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2024

पश्चिम तथा पंजाब अंग ठुमरियां बोल बांट की है परंतु यहां यह उल्लेख करना समीचीन होगा कि पंजाब की ठुमरियों में बोल तान और ऊंचे स्वरों की गायकी मशहूर है जिसमें छोटी तानों का प्रयोग होता है। एक विद्वान के अनुसार "लखनऊ की नजाकत, पंजाब की सफलता, बनारस की चैनदारी यह सब ठुमरियां भिन्न-भिन्न रुचि वाले श्रोताओं को आकर्षित करती हैं।" ठुमरी चाहे पूर्व अंग की हो या पंजाब अंग की प्रत्येक अंग की ठुमरी पर लोकगीत और लोक धुनों और लोक भाषाओं का प्रभाव दिखाई देता है। देसी गीत संगीत का अपना एक पृथक स्वरूप होता है जो स्थानीय प्रभाव प्रकट करता है। ठुमरी गायन का मुख्य आधार लोक रुचियों के संवेदनात्मक गीत हैं। लोकगीतों से ठुमरी का उद्भव माना जाता है। लोकगीतों का विकसित एवं परिवर्तित रूप का शास्त्रीय गायन ही ठुमरी के रूप में विकसित हुआ। पंजाब की ठुमरियों में पहाड़ी धुनों माहीया आदि लोक लोक धुनों का रूप है। ठुमरी में जहां तक राग, ताल का प्रश्न है सभी अंगों की ठुमरी मुख्यतः तिलंग, खमाज, पीलू, काफी, भैरवी, झिंझौटी, बरवा, पहाड़ी, सिंदूरा रागों में गायी जाती है। दीपचंदी, पंजाबी, जतताल, तीनताल का प्रयोग होता है। उदाहरण स्वरूप सनद पिया की राग भैरवी में तीन ताल में ठुमरी की निम्नांकित स्वरलिपि प्रस्तुत है:-

राग भैरवी तीनताल मात्रा-16 मध्य लय

स्थाई

नि॒ स ग॒ म कै सी ये भ 3	(ध॒) – ध॒ प ला ऽ ई र ×	– ध॒ प प ऽ क न्हा इ 2	म प म ध॒ प नि याँ भ 0
म प म ग॒ रे॒ र त मो रि 3	म ग॒ प ध॒ नि ग ग रि गि ×	म ध॒ प ग॒ म रा इ क र 2	रे॒ ग॒ रे॒ स स के ल रा इ 0

अन्तरा

ध म ध नि स न द क 0	सं – सं नि हे ऽ ऐ सो 3	सरें गं रें गं ढीऽ ऽ ठ भ ×	रें गं सं रें सं सं यो क न्हा इ 2
ध – ध ध का ऽ क रुँ 0	प म प ग ग रे मा इ न हिं 3	ग प ध नि मा न त क ×	म ध प ग म न्हा इ क र 2
रे ग रे स स त ल रा इ 0			

आलोचना

भारतीय संगीत संपूर्ण विश्व के सर्वोत्तम शिखर पर है चाहे वह राग हो, गायन शैली हो अथवा वाद्य का क्षेत्र ही क्यों न हो। भारतीय गायन शैलियों में ठुमरी गायन ने तो सर्वत्र अपना डंका बजा रखा है चाहे वह फिल्मी दुनिया में हो या संगीत सम्मेलनों में। परंतु महान संगीतज्ञ जब ठुमरी के प्रति तुच्छ विचार रखते हुए इसे क्षुद्र गायकी कहते हैं तो हृदय में गहन दुःख क्षोभ व्याप्त हो उठता है जिसका कारण ठुमरी में रागों के नियमों की अवहेलना और वेश्याओं के कोठे का गीत कहा जाना है। ध्रुपद और ख्याल के संगीतज्ञ ठुमरी की उपेक्षा करते हैं। भातखण्डे जी का कथन है--"ठुमरी भी एक क्षुद्र गीत ही माना जाता है--उच्च कोटि के गायक ठुमरी-गान को निम्नकोटि का गान कहते हैं।"

विचारणीय है कि रीतिकालीन राधा कृष्ण की लीलाओं से संबंधित श्रृंगार रस से युक्त प्रेम भाव से पुष्पित संयोग-वियोग की पवित्र धारा से सिंचित गान को क्षुद्र कहा जाना कहां तक समीचीन है। भगवान कृष्ण के उपासक सगुण भक्ति के संत कवि पंडित ललन पिया न केवल ठुमरी गीतों के रचनाकार थे अपितु ठुमरी गायन में उन्हें महारथ प्राप्त थी। ऐसे में ठुमरी का संबंध मात्र वेश्याओं के कोठे से लगाकर निम्न श्रेणी का कहा जाना कहां तक सार्थक है। कहा जाता है कि ठुमरी राग हीन है। जिसमें राग के नियमों पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

क्या भैया गनपत राव, पंडित ललन पिया, उस्ताद सादिक अली खां, छन्नू साहेब स्वर्गीय आशिक अली, शोरी मियां ने बिना राग के ठुमरी का गायन किया होगा विचारणीय बिंदु है। आज के संगीतात्मक वातावरण में जो ठुमरी ने तहलका मचा रखा है वह शायद अन्य किसी गायन शैली ने नहीं। "दिलीप चंद्र बेदी कहते हैं---- ठुमरी गाने वालों के सरताज भैया गनपत राव और उनके शागिर्द रशीद मौजुद्दीन खां साहब ने जब अमृतसर में आकर गाया, तब हर शख्स झूम उठा।" वास्तव में 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण एवं 20वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही संगीत क्षेत्र में ठुमरी एक ऐसी प्रतिष्ठित गायकी के रूप में प्रसिद्ध हुई कि ध्रुपद एवं ख्याल गायकी के संगीतकार जो ठुमरी की उपेक्षा करते थे ठुमरी के कलात्मक एवं माधुर्य विशेष्य गुण से प्रभावित हुए और संगीतज्ञों ने न केवल इस शैली को अपनाया अपितु महान संगीत सम्मेलनों में ठुमरी गाकर प्रसिद्धि प्राप्त की। अंततोगत्वा भातखंडे जी ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि ठुमरी गाना कठिन है और हो भी क्यों न। राग और ऊंचे स्वर तथा निश्चित लय ठुमरी गाने के निश्चित नियम हैं। "ठुमरी का गान घृणित कदापि नहीं है---ठुमरी उत्तम प्रकार से गाना सरल नहीं है।" ठुमरी गायन की विशेषताओं के आलोक में एक विद्वान का कथन है कि "ठुमरी की एक प्रकृति है। वह विरहिन भी है और मद-भरी सुहागिन भी। उसे संयोग में वियोग की आशंका है। वियोग में उसे संयोग की स्मृतियां बेचैन बनाती हैं।" इस प्रकार ठुमरी नारी हृदय की कोमलता का चित्रांकन है उसका वेश्याओं के कोठे से जोड़ना उसके प्रति घोर अपराध ही होगा।

निष्कर्ष

नारी के श्रृंगारमयी, करुणामई भावों, प्रेम भक्ति, हर्ष शोक, उपालम्भ, गीत-नृत्य से युक्त अभिव्यक्ति जिसमें नर्तक की स्थाई एवं अस्थाई मनोवृतियों का प्रदर्शन है को ठुमरी कहते हैं। ठुमरी का उद्भव ठुमक-ठुमक कर चलना तथा राधा कृष्ण की लीलाओं की आध्यात्मिक अभिव्यंजना से है। सादिक अली खां ठुमरी के आविष्कारक माने जाते हैं तथा अवध नवाब वाजिद अली शाह के शासनकाल में ठुमरी का उल्लेखनीय विकास हुआ। भैया गनपत राव, सनद पिया, मौजुद्दीन खां, बड़े गुलाम अली खां आदि महान संगीतज्ञ ठुमरी के मशहूर गायक थे। कृष्ण भक्त ललन पिया महान संगीतकार ने अनेक ठुमरियों की रचना ही नहीं की अपितु गायन भी किया। लखनऊ तथा बनारस की बोल बनाव की ठुमरी तथा उत्तर प्रदेश के पश्चिम भाग में बोल बांट की ठुमरी प्रसिद्ध है। ठुमरी का मूल आधार लोक भाषा तथा लोकगीत होता है। ठुमरी भारतीय संगीत गायन शैलियां में प्रतिष्ठित शैली मानी जाती है।

संदर्भ

1- भारतीय संगीत का एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रो०स्वतंत्र शर्मा, अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद 2014।
2- पंजाब की संगीत परंपरा, डॉ० गीता पेंतल, राधा पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली 1988।
3- ठुमरी की उत्पत्ति विकास और शैलियां, शत्रुघ्न शुक्ल, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय प्रथम संस्करण 1983।
4- संगीत रूप भाग -3, डॉ० दविंदर कौर, पर्ल बुक्स प्राइवेट लिमिटेड पटियाला, 2017।
5- संगीत के घरानों की चर्चा, डॉ० सुशील कुमार चौबे, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, प्रथम संस्करण, 1977।
6- गीत सूत्रसार (प्रथम भाग), श्री कृष्णधन बंदोपाध्याय, अनुवादिका प्रो० डॉ० लिपिका दास गुप्ता, पिलग्रिम्स पब्लिशिंग वाराणसी, 2014।
7- निबंध संगीत, लक्ष्मी नारायण गर्ग, कार्यालय हाथरस, उ० प्र०, 2012।
8- क्रमिक पुस्तक मालिका (भाग 1 से 6 तक), पं० विष्णु नारायण भातखंडे, प्रकाशक संगीत कार्यालय हाथरस, 1974।